# प्रतिदिन

## बाजार में अच्छे संकेत

शुक्रवार को एक ओर, जहां भारतीय शेयर बाजार में उछाल देखी गई, वहीं डॉलर के मुकाबले रुपए के भाव में भी बढ़त का क्रम बना है. शेयर बाजार में लगातार गिरावट को लेकर चिंता बढ़ रही थी और गिरावट को रोकने के लिए भारत सरकार व भारतीय रिजर्व बैंक ने बीते दिनों कुछ मौद्रिक उपाय किए थे. इसके अलावा अमेरिका-ईरान युद्ध के भी समापन की संभावना जताई जा रही है. कुल मिलाकर, दुनिया में निवेश अनुकूल माहौल बना है, जिसका फायदा भारत और भारतीय शेयर बाजार को भी मिलता दिख रहा है. शुक्रवार को मुंबई शेयर बाजार का सूचकांक सेंसेक्स 75,527.95 अंकों पर बंद हुआ और निफ्टी ने 23,600 के आंकड़े को पार कर लिया. मुंबई शेयर बाजार में 1,695.40 अंकों की उछाल के पीछे विश्व स्तर पर कच्चे तेल की गिरती कीमत भी एक बड़ा कारण है. क्रूड ऑयल की कीमतों में चार से पांच प्रतिशत की गिरावट आई है और यह 86 से 90 डॉलर प्रति बैरल तक आ गया है. कच्चे तेल के घटते भाव से अर्थव्यवस्थाओं को निश्चित ही बल मिलेगा और निवेशकों का मनोबल बढ़ेगा.यह हम अच्छे से जानते हैं कि विश्व स्तर पर कच्चे तेल की कीमतों में जब गिरावट आती है, तब भारतीय अर्थव्यवस्था पर अच्छा असर पड़ता है. जब तेल आयात का हमारा खर्च बचेगा, तब रुपये को भी बल मिलेगा. हालांकि, यह कहना बहुत जल्दबाजी होगी कि युद्ध वाकई खत्म होने वाला है और भारतीय अर्थव्यवस्था में सुधार का क्रम तेज होने वाला है.

ध्यान रहे, अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पहले भी युद्ध विराम के संकेत दे चुके हैं, लेकिन इस बार ऐसा लग रहा है कि युद्ध समापन की ओर बढ़ेगा. संकेत मिल रहे हैं कि जी 7 की आगामी बैठक के दौरान ही कोई समझौता हो जाएगा. जी 7 की बैठक में अमेरिकी राष्ट्रपति भी जा रहे हैं और भारतीय प्रधानमंत्री भी वहां रहेंगे. भारतीय प्रधानमंत्री और विश्व के अन्य आला नेताओं को मिलकर यह सुनिश्चित करना चाहिए कि पश्चिम एशिया में फिर अमन-चैन बहाल हो जाए. दुनिया इस फिजूल युद्ध को ज्यादा समय तक नहीं झेल सकती. आज के हालात में दुनिया का कोई देश महंगाई या मंदी झेलने की स्थिति में नहीं है. अमेरिका की स्थानीय राजनीति में खुद डोनाल्ड ट्रंप की स्थिति लगातार कमजोर हो रही है. अनेक लोग यह समझ नहीं पा रहे हैं कि ट्रंप ऐसे युद्ध में संसाधन क्यों खर्च कर रहे हैं? ऐसे में, जिन शक्तिशाली देशों के हाथों में अमन-चैन की कमान है, उन्हें विशेष रूप से सजग होना पड़ेगा. जी-7 की बैठक में दुनिया के प्रति ज्यादा गंभीर फैसलों की उम्मीद करनी चाहिए. आज दुनिया जिस निर्णायक मोड़ पर पहुंच गई है, वहां जरूरी है कि युद्धों को रोका जाए और महाशक्तियां वैश्विक विकास व मानवीयता के लिए काम करें.वैसे, भारत को अपने शेयर बाजार में फौरी सुधार से संतुष्ट नहीं होना चाहिए. अभी और कदम उठाने की जरूरत है. विश्व स्तर पर सुलह की कोशिशों के साथ ही, आंतरिक रूप से भी अर्थव्यवस्था को संबल देते रहना होगा. दक्षिण कोरिया, जापान और हांगकांग के शेयर बाजारों में भारत से ज्यादा तेजी देखी गई है. मतलब, वहां भारत की तुलना में ज्यादा तेजी से निवेश आ रहा है. भारत में भी अधिक तेजी से निवेश आए, इसके लिए अन्य मौद्रिक और बुनियादी प्रयासों की भी जरूरत है. महंगाई अभी काबू में है, तो उस पर पकड़ बनी रहनी चाहिए. भारतीय अर्थव्यवस्था में बाह्य और आंतरिक रूप से सबके विश्वास को बहाल रखना आज समय की सबसे बड़ी मांग है.

# चीन से बहुत कुछ सीखना होगा

**हमारी सड़कें, हमारे रेलवे स्टेशन, हवाई अड्डे और अन्य सार्वजनिक स्थान चीन के मुकाबले अराजक लगते हैं, हमने तरक्की की है, लेकिन सामाजिक आचार-व्यवहार और तेजी से आगे बढ़ने के लिए आवश्यक अनुशासन अपनाने बाकी हैं, यही वजह है कि हर बार चीन अगर लुभाता है, तो चुनौती भी देता.**

अपनी मां की अंगुली पकड़े वह हमारे आगे चल रही थी, अचानक उसने गर्दन घुमाई और हमें अपने पीछे पाकर पल भर को ठिठकी. बीजिंग के ह्यफॉरबिडेन पैलेस में उस वक्त भारी भीड़ थी. बेटी को पिछड़ता देख मां ने झिड़का, तो उसने मासूमियत से हमारी ओर अंगुली उठा दी. भीड़ के उस जबरदस्त रेले में महज हम दो हिन्दुस्तानी थे. हमारे नैन-नक्श उस बच्ची की जिज्ञासा की वजह बन गए थे, उसने और उसकी मां ने परंपरागत चीनी परिधान धारण कर रखे थे. मैंने फोन दिखाकर पूछा, फोटो खिंचवाओगी? वे समझ न सकीं. चीन में भाषा बड़ा अवरोध साबित होती है, लेकिन हमारे गाइड ने तजुर्मा कर दिया. दोनों ने खुशी-खुशी फोटो खिंचवाई. इस छोटे, लेकिन मनमोहक वाकये से मुझे पश्चिम और पूरब का फर्क समझ में आ गया. यूरोप में तो लोग ऐसी बातों से नाराज हो जाते हैं. चीन के लोगों ने पूरी तरह पश्चिमी रहन-सहन को अपना लिया है, लेकिन वे अपनी संस्कृति और विरासत से भी जुड़े रहना चाहते हैं. गुजरे वक्त के सम्राटों के उस महल में किपाओ पहने सैकड़ों महिलाएं और बच्चियां इसकी चलती-फिरती बानगी थीं. बच्चों को यहां अपनी विरासत से रूबरू करने के लिए लाया गया था.

कोई आश्चर्य नहीं कि पिछले दो दशक में इस देश ने विकासशील मुल्क से संसार की दूसरी निर्विवाद ताकत तक का सफर तय किया है. आज वहां प्रतिव्यक्ति सालाना आय 14,875 अमेरिकी डॉलर के आसपास है. इस दिलखेज आंकड़े ने पिछले पांच सालों में लगभग तीन गुना छलांग मारी है. हैरानी नहीं कि पूरी दुनिया को धमकाने वाले डोनाल्ड ट्रंप पिछले महीने बीजिंग दौरे के दौरान आवश्यकता और अनुमान से अधिक विनम्र नजर आए. तरक्की की इस रफ्तार से रश्क करने वाले यह कहकर गुबार निकालते हैं कि चीन में सच्चा लोकतंत्र नहीं है, ऐसे महानुभावों को याद दिलाना चाहिए कि आदिकाल से सन् 1772 तक चीन विश्व की पहली और भारत दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होता था. गौरांग महाप्रभुओं से आजादी के बाद दोनों ने अपने-अपने तरीके से प्रगति-यात्रा शुरू की, लेकिन चीन बहुत आगे निकल गया. इसका एक कारण यह भी है कि अमेरिका ने सस्ते श्रम के लालच में 1972 के बाद से यहां के औद्योगीकरण में बेतहाशा संसाधन खर्च किए. फिलवक्त वहां 123 बिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश फल-फूल रहा है. अन्य पश्चिमी देश भी यहां लगभग एक खरब डॉलर का निवेश कर चुके हैं, इसके उलट भारत उन दिनों भी अमेरिका के निशाने पर होता था.

वे शीतयुद्ध के बदनाम दिन थे और हिन्दुस्तान दूसरी दुनिया, यानी सोवियत संघ के प्रभाव में माना जाता था. मास्को 1971 के भारत-पाक युद्ध में वीटो और हथियार लेकर हमारे साथ खड़ा था, जबकि पाक फौज अमेरिकी टैंकों और युद्धक विमानों के बल पर हमसे जूझ रही थी, उस जंग में पाकिस्तान पूर्वी मोर्चे पर बुरी तरह परास्त हुआ और उसके 90 हजार से अधिक सैन्यकर्मियों को समर्पण करना पड़ा था, उन दिनों अमेरिकी राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन भारतीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के लिए खुलेआम अपनी नापसंदगी का इजहार करते थे. इस युद्ध से ऐन पहले एक युगांतरकारी घटना गुप-चुप घटी थी, तत्कालीन अमेरिकी विदेश मंत्री हेनरी किसिंजर 1971 में बीजिंग की गोपनीय यात्रा के लिए छद्म नाम से पाकिस्तानी धरती से उड़े थे, उस खुफिया दौरे के दौरान किसिंजर और चीनी प्रधानमंत्री झाउ एन लाई की बातचीत ने चीन की धुआंधार प्रगति की आधारशिला रखी थी. किसिंजर को आधुनिक युग का चाणक्य माना जाता है, पर उनकी दूरदेशी भोथरी थी. किसिंजर यह भांपने में नाकाम रहे थे कि वह अनजाने में ऐसा भस्मासुर पैदा कर रहे हैं, जो आने वाली सदी में खुद उनके मुल्क के लिए चुनौती बन जाएगा, यदि उन्होंने पाकिस्तान का मोह त्यागकर भारत के साथ सहयोगी रुख अपनाया होता, तो आज भूमंडलीय राजनीति का इतिहास-भूगोल अलग होता.

मैं ऐसा क्यों कह रहा हूं? कोरोना काल में, जब समूची दुनिया की सप्लाई चेन ठप हो गई थी, तब एक विचार उभरा था कि चीन दुनिया की फैक्टरी अवश्य है, लेकिन अब ह्यचाइना प्लस वन की नीति अपनानी चाहिए. भारत इस मामले में विश्व के बड़े औद्योगिक समूहों की पहली पसंद था, लेकिन संकट समाप्त होते ही इस विचार पर भी पाला पड़ गया. अगर यह नेक काम 70 के दशक में किया गया होता, तब!

आज जो लोग चीन की प्रगति का हवाला देकर भारत को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं, उनसे विनम्र अनुरोध है कि हमारी स्थिति उतनी बुरी भी नहीं, जितनी मान ली गई है.ड्रैगन ने दुनिया के लिए अपने दरवाजे किसिंजर की यात्रा के बाद 1970 के दशक में खोले थे. भारत इस मामले में लगभग दो दशक पीछे रहा. नरसिंह राव और मनमोहन सिंह की जोड़ी ने 1991 में भारतीय ह्यपेरेस्त्रोइकाह्न की शुरूआत की. इसके नतीजे बुरे नहीं साबित हुए. पिछले 25 वर्षों में भारत ने 6.5-7 फीसदी की औसत विकास यात्रा कायम रखी है. 2008 के आर्थिक झटके, कोरोना का संकट और अब होर्मुज का हलाहल भी इस दर को बाधित नहीं कर सका है. सिर्फ चीन 8 से 8.5 फीसदी औसत विकास दर के साथ हमसे आगे है. कई अर्थशास्त्री मानते हैं कि जिस दिन हम 7.5 प्रतिशत की निरंतरता हासिल कर लेंगे, हमारी तमाम समस्याएं हल हो जाएंगी.

तमाम लोग चीन के विकास के लिए उसकी सर्वाधिकार संपन्न सत्ता की दुहाई देते हैं. यह आंशिक तौर पर सत्य है. चीन में हर कुछ मीटर पर कैमरे लगे हुए हैं. वहां इन कैमरों की ह्यरियल टाइम मॉनिटरिंगह्न के लिए भीड़-भाड़ वाली हर जगह पर मोबाइल कंट्रोल रूम दीख जाते हैं. ये कंट्रोल रूम बीजिंग के मोबाइल सेल्यूलर नेटवर्क के बिग डाटा से जुड़े हुए हैं, वहां कहा जाता है कि अपराध तो छोड़िए, अगर कोई बदहवास स्थिति में सड़क पर घूम रहा होगा, तो 10 से 15 मिनट के भीतर कोई न कोई पुलिस वाला आकर उससे पूछताछ करने लगेगा.एक बात और सभी संसाधनों से युक्त होने के बावजूद चीन के लोगों को आज भी उस जानकारी पर निर्भर रहना होता है, जो सरकार मुहैया कराती है. मैंने इस लंबे प्रवास के दौरान कई नौजवानों से पूछा कि आप भारत के बारे में क्या जानते हैं? जवाब मिला- हम वही जानते हैं, जो हमारी सरकार हमें बताना चाहती है. यहां डीपसीक और उसके जैसे अन्य चीनी संसाधनों का जिक्र जरूरी है, वे एक तरफ लोगों की जानकारियां सीमित रखते हैं, तो दूसरी तरफ उन्हें नायाब सुविधाएं भी मुहैया कराते हैं. मैंने खुद देखा कि वाहन चालक ड्राइविंग के दौरान जो नक्शा प्रयोग कर रहे थे, वह गूगल मैप के मुकाबले ज्यादा सटीक था. अलीपे और अन्य कारगर पे एप्स का कमाल है कि चीन का समाज लगभग ह्यकैशलेस हो चुका है, वहां कई दुकानदार नकदी लेने से साफ मना कर देते हैं.

रही बात सीमित जानकारी की, तो विश्व-दृष्टि का अभाव वहां के नौजवानों को विपन्न नहीं बना रहा, इसके विपरीत वर्षों के अनुशासन और लगातार भारी होती जेब ने उन्हें अपने विकास के प्रति ज्यादा ह्यफोकस्ड बना दिया है.

भारत के लिए यह एक सबक है. हमारी सड़कें, हमारे रेलवे स्टेशन, हवाई अड्डे और अन्य सार्वजनिक स्थान चीन के मुकाबले अराजक लगते हैं, हमने तरक्की की है, लेकिन सामाजिक आचार-व्यवहार और तेजी से आगे बढ़ने के लिए आवश्यक अनुशासन अपनाने बाकी हैं,यही वजह है कि हर बार चीन अगर लुभाता है, तो चुनौती भी देता प्रतीत होता है.

**शशि शेखर.**

### मैं जो कूछ भई कहूंगी...

# स्टैंड अप कॉमेडी और बहकता युवा वर्ग

**पिछले** कुछ वर्षों से, स्टैंड अप कॉमेडी का क्रेज बढ़ता ही चला जा रहा है. यह कॉमेडी अक्सर बंद दरवाजों के पीछे किसी होटल में, या हॉल में, होती है और इतनी नग्न, घटिया, लेकिन नमकीन, इसलिए कॉमेडी का मजा लेने युवक-युवतियां पहुंच जाते हैं. पर यह कार्यक्रम निम्न दर्जे का, नग्नता फैलाने वाला और गलत भाषा में प्रस्तुत किया गया होता है . इस पर केवल विवाद चल रहे हैं पर कोई कठोर कार्रवाई होती दिखाई नहीं दे रही क्यों ? क्या सरकार के पास समय नहीं है ? या उनमें वह हिम्मत नहीं है ? ***नौ रसों में हास्यरस का महत्वपूर्ण स्थान है अत्रे, पु.ल., काका हाथरसी, हरिशंकर परसाई, ऐसे अनेक नाम हैं, जिन्होंने रोते हुवों को भी हंसा दिया.***

आज भी मेरे देश के अधिकांश युवा राष्ट्रभक्त और शिवाजी भक्त है. फिर मुठ्ठी भर बिगडैल युवाओं के लिए क्यों सोचा जा रहा है ? विपक्ष चिल्लायेगा तो चिल्लाने दीजिए, उसके पास उतना ही काम है.

कुणाल, रणवीर, प्रणीत मोरे, मुनव्वर, डॉक्टर सेजल पवार - ऐसे कई नाम हैं, जो स्टैंड अप कॉमेडी के नाम पर नग्नता फैला रहे हैं. ***रणवीर ने तो अपने माता-पिता को भी नहीं छोड़ा, इनमें सबसे अधिक गुस्सा मुझे डॉक्टर सेजल पवार पर आ रहा है, वह डॉक्टर होने के रास्ते पर है, पर उसने जो दान दिए गए डेड बॉडिज पर बोला वह कतई माफ करने के लायक नहीं है, जिसके विचार इतने घटिया हैं, वह स्वयं कितनी घटिया डॉक्टर बनेगी? यह सोचा ही जा सकता है.***

पहली बात तो भारत जैसे धार्मिक और परंपरावादी देश में नेत्रदान या देहदान करने वाले लोग कम ही मिलेंगे. कई लोग अंधविश्वासों के मारे देहदान नहीं करते, चाहे लाख माथा पटक ले और ***जिन्होंने किया उसके प्रति डॉक्टर सेजल पवार के यह विचार है ? सेजल एक कलंक है, उस पर अस्पताल द्वारा तुरंत कठोर कारवाही होनी चाहिए. आज भारत को ऐसे घटिया डॉक्टर की कोई जरूरत नहीं है. किसी एक वयोवृद्ध डॉक्टर ने 15 साल की बच्ची पर बीमार हालात में रेप किया अब सोचिए, क्या सोच रही है सरकार ? हमारी न्याय प्रक्रिया इतनी धीमी और बोर है कि बस ! अपराधियों को ढूंढते ही रह जाओगे और छोड़ते ही रह जाओगे.***

डॉक्टर सेजल पवार की बात मुझे इसलिए बहुत बुरी लगी क्योंकि मेरे आदरणीय गुरु स्वर्गीय प्रोफेसर पद्मचंद जैन ने भी देहदान किया था और एक उत्तम उदाहरण समाज के सामने पेश किया था.

सरकार को सेजल पर कडी कारवाही करनी चाहिए

इस दिशा में कड़े कदम उठाने चाहिए. हिंदू हो या कोई और उन पर बुलडोजर चलाइए. यह भी एक प्रकार से देशद्रोह ही है. बीमार मानसिकता वाले लोग- इन लोगों के स्टॅंड अप कॉमेडी देखकर खुद की अश्लीलता का समाधान करते हैं.सरकार अंधी और बहरी हो रही हो ! तो क्या ही कर सकते हैं ? पर मुझे नहीं लगता कि देवाभाऊ छोड़ेंगे....

**प्रो.ज्योति व्यास.** अमरावती.

# फुटबॉल के महाकुंभ में भारत कहीं नहीं

अमेरिका, मेक्सिको और कनाडा की मेजबानी में फीफा विश्व कप के शुरू होते ही पूरी दुनिया फुटबॉलमय होने लगी है. जाहिर है, हमारा देश भी इसमें पीछे नहीं रहने वाला. करोड़ों फुटबॉल प्रेमी भारतीय अब रातों में जाग-जागकर इस विश्व कप के मैच देखेंगे और दिन भर उनकी चर्चा करते नजर आएंगे. पर हर चार साल पर जब-जब यह आयोजन होता है, तब-तब एक सवाल जरूर पूछा जाता है कि भारत विश्व कप में क्यों भाग नहीं ले पाता है? जब देश में फुटबॉल के प्रति इस कदर लगाव है, तो इसका देश में फुटबॉल स्तर सुधारने में हम इस्तेमाल क्यों नहीं कर पाते हैं? भारतीय फुटबॉल फेडरेशन ने राजनेता के बजाय फुटबॉलर को जिम्मेदारी सौंपी, पर यह प्रयोग भी देश में रंग दिखाने में कामयाब न हो सका हैय हम अभी- भी टॉप 100 देशों की सूची से बाहर बने हुए हैं.दरअसल, हमारे यहां यूरोपीय और लातिन अमेरिकी देशों की तरह पांच-छह साल की उम्र से ही बच्चों को प्रशिक्षित करने की कोई व्यवस्था नहीं है. यूरोप के छोटे-छोटे देशों में छोटी उम्र से बच्चों को सिखाने के लिए पेशेवर अकादमियां हैं, जिससे उनमें शुरूआत में ही तकनीकी रूप से मजबूत नींव पड़ जाती है, इसके विपरीत हमारे यहां युवा होने पर इस खेल को अपनाया जाता है. देश में पेशेवर अकादमियों की कमी की वजह से फुटबॉल अपनाने वालों में से कुछ ही वहां तक पहुंच पाते हैं.

यूरोप और लातिन अमेरिकी देशों में विश्व स्तरीय प्रशिक्षण केंद्र हैं, जो खेल विज्ञान केंद्र से जुड़े रहते हैं. खिलाड़ियों को शुरूआत से आधुनिक जिम की सुविधाएं उपलब्ध रहती हैं. भारत में आईएसएल की शुरूआत के साथ ऐसी सुविधाओं की शुरूआत तो हुई है, पर यह कुछ ही खिलाड़ियों के लिए उपलब्ध हैं. हमारे क्लबों में फुटबॉल फेडरेशन का कोई जोर न चलने का भी नुकसान हो रहा है. आलम यह है कि साल 2023 में ग्वांगझू एशियाई खेलों के लिए चुने गए कई खिलाड़ियों को आईएसएल (इंडियन सुपर लीग) क्लबों ने छोड़ा ही नहीं. इसके कारण भारत अपनी सर्वश्रेष्ठ टीम भेज ही नहीं सका, यह समस्या कोई नई नहीं है. आईएसएल के साल 2014 में शुरू होने से पहले कोलकाता सीनियर डिवीजन लीग के

क्लब ऐसा व्यवहार किया करते थे, हमें याद है, साल 2006 में कोच डेविड हॉटन, ईस्ट बंगाल और मोहन बागान के खिलाड़ियों को राष्ट्रीय कैंप के लिए रिलीज नहीं करा सके थे.

भारत की एक बड़ी समस्या यह है कि हमारे यहां फुटबॉल के स्तर को सुधारने के जो भी प्रयास किए जाते हैं, वे ऊपर से नीचे की तरफ चलते हैं. आईएसएल की शुरूआत को भी आप इसी तरह देख सकते हैं. असल में जरूरत जमीनी स्तर से सुधार लाने की है, इसके लिए जिला स्तर पर आधुनिक सुविधाओं वाली अकादमियां खोलनी होंगी, ऐसा करना एकदम से तो संभव नहीं है, पर हरेक राज्य में ऐसी दो-चार अकादमियां तो खोली ही जा सकती हैं.हमारे देश में क्रिकेट को लोग दीवानगी की हद तक प्यार करते हैं, इसकी वजह से इस खेल में पैसे की भरमार है. इस वजह से खेल सुविधाओं व खिलाड़ियों पर खूब पैसा खर्च किया जाता है. बीसीसीआई की टी-20 लीग आईपीएल हर साल कई बच्चों को करोड़पति बना देती है. फुटबॉल में दशकों तक देश की सेवा करने वाले खिलाड़ी भी इस स्थिति तक नहीं पहुंच पाते हैं, ऐसा नहीं कि फुटबॉल में पैसा नहीं है. इंग्लिश प्रीमियर लीग में जितना पैसा है, आईपीएल उसके आसपास भी नहीं है. हमारे यहां फुटबॉल की दीवानगी को भुनाने की सही कोशिश तक नहीं की गई है.भारतीय फुटबॉल का स्तर हमेशा से ऐसा नहीं था. 1950 और 60 के दशक को भारतीय फुटबॉल का स्वर्ण काल माना जाता है. इस दौरान देश की टीम ने चुन्नी गोस्वामी, पपीके बनर्जी व बलराम जैसे फुटबॉलर दिए. इस तिकड़ी ने 1956 के ओलंपिक में सेमीफाइनल तक भारतीय चुनौती पेश की थी और 1962 के एशियाई खेलों में स्वर्ण पदक जीता था, लेकिन हम इसके बाद पिछड़ते चले गए. हालत यह है कि हम फीफा रैंकिंग में 139 वें नंबर तक पिछड़ गए हैं. **-सुशांत बैनर्जी**

### जब हम दूसरों की खुशियों का जश्न मनाने और उनके दु:खों पर मौन होना सीखेंगे

# भीड़ में भी अकेले हैं हम

**युद्ध, आपदाओं और परीक्षाओं से जुड़े प्रश्न पूछ रहे हैं कि फोन में कई-कई जीबी की मेमोरी और हजारों कांन्टेक्ट्स के बावजूद आखिर हम अकेले क्यों हैं ? इसका जवाब तभी मिलेगा, जब हम दूसरों की खुशियों का जश्न मनाने और उनके दु:खों पर मौन होना सीखेंगे.**

**अगर** कोई यह पूछे कि युद्ध, आपदाओं और नफरतों के दौर में आखिर भाईचारे का अर्थ क्या रह गया है, तो आप क्या जवाब देंगे? गंगा-जमुनी तहजीब का बिखरना हर पल तकनीक से जुड़ी दुनिया के लिए कोई अच्छा संकेत नहीं है. यह सामूहिक दु:ख का प्रश्न है. अब कुछएकल दुख की बात करें, खासकर उनके लिए, जो सीबीएसई से लेकर जेईई की परीक्षा में चूक गए हैं. ऐसे में, वे भला अपना दुख किससे जाहिर करें?

जो जिंदगी से लेकर क्लास रूम तक की परीक्षा तक में विफल हो रहे हैं, वे भी तो अकेले ही होते जा रहे हैं, अपने फोन में कई-कई जीबी की मेमोरी लिए ये सभी अपने मन का दु:ख किससे कहें? ये सारे प्रश्न किसी विरोधाभास का संकेत नहीं कर रहे, बल्कि पूछ रहे हैं कि हमारे पास हजारों कांटेक्ट्स होते हैं, पर मुश्किल घड़ी में हम किसी को पुकार नहीं पाते और कोई बचाने नहीं आता. सब जगह मनुष्य अकेला ही दिख रहा है, तो फिर किसे अपना माना जाए? कौन हमारे सुख-दुख का साथी बने? आपने कभी ध्यान दिया है कि हमारे फोन में हजारों नंबर होते हैं, पर हम बात कोई दस-बीस से ही करते हैं, ऐसा क्यों? जब किसी मुश्किल में या खुशी के जश्न में किसी को फोन करना होता है, तो उन्हीं दस-बीस नंबरों से हमारी बातचीत होती है और अगर हम अपने आप से कुछ बुनियादी प्रश्न पूछ बैठें, तो फिर वह कांटेक्ट लिस्ट और कम हो जाती है.हाल ही में, मैंने एक बहुराष्ट्रीय कंपनी के शीर्ष नेतृत्व को पढ़ाते हुए कुछ प्रश्न किए. वे प्रश्न कुछइस प्रकार के थे: वे कौन लोग हैं, जिनका आप आदर करते हैं? वे कौन लोग हैं, जो आपको आदर देते हैं? मुसीबत में आप किन लोगों को फोन करना चाहेंगे? अपने मन की बात आप किनसे कहते हैं? ऐसे कितने लोग हैं, जो आपसे अपने सुख-दुख बांट सकते हैं? यह जीवन आप किसके लिए जी रहे हैं? आपकी सफलता और उपलब्धि से कितने लोग खुश होते हैं? ऐसे ही कुछ और प्रश्न !हमें सिखाया तो यह जाता है कि यह युग संप्रेषण का है और इससे बड़ी योग्यता और कुछ भी नहीं. अगर हम संचार नहीं कर पाते, तो फिर सारी योग्यता बेमानी है. डिजिटल युग में मैसेजेस और मेल्स से जुड़ी जनता पूछना चाहती है कि आखिर संबंधों का तात्पर्य क्या होता है? हम अपनी खुशी बहुत कम लोगों से इसलिए बांट पाते हैं. हमें यह यकीन नहीं होता कि हमारी खुशी उस व्यक्ति को भी प्रफुल्लित करेगी, क्योंकि किसी की सफलता किसी और के लिए तुलना का कारण बन जाती है. यह तुलनात्मक भाव किसी को किसी की प्रशंसा करने से रोक देता है.हम यह न भूलें कि किसी के गुणों को सम्मान देना सिर्फ एक मानवीय गुण नहीं, बल्कि वह एक ऐसी विशिष्टता भी है, जो किसी शेन वार्न को सचिन की प्रशंसा करने से नहीं रोक सका. जब सगे-संबंधियों में ह्यहमारे परिवारह्न का भाव नहीं रह जाता, तो फिर जीत का जश्न भी फीका रह जाता है. जहां तक दुख के भावों की अभिव्यक्ति है, तो उसके लिए भी दरवाजे बंद ही रहते हैं. कोई समाज भले ही जुड़ने की वकालत करे, लेकिन व्यक्ति अपने सुखों और दुखों के साथ अकेला है. चाहे वह घर में हो, ऑफिस में या भीड़ के बीच-उसकी उपयोगिता सिर्फ बाजार के मापदंडों तक ही रह गई है. जीवन जैसे कृष्ण की तरह उससे बार-बार यही कह रहा है कि सभी के साथ हो, पर किसी के साथ नहीं! इसलिए लिप्त रहकर भी निर्लिप्त रहो.

अगर असली रिश्तों की संख्या दहाई भी पार नहीं कर पाई, तो मनुष्य के उस सामाजिक संप्रेषण और सरोकार का क्या हो? इन सारे प्रश्नों का जवाब सिर्फ और सिर्फ उस आत्म-ज्ञान में है, जो भावनात्मक और आध्यात्मिक मेधा से प्राप्त होता है. हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि अपनों की संख्या तभी बढ़ती है, जब समाज दूसरों की खुशी का जश्न मनाता है और उनके दुखों पर मौन भी होना जानता है. यह संख्या तभी बढ़ेगी, जब कृतज्ञता का भाव हमें जीवन जीने का रास्ता दिखाए. जब उनमें से कई आपकी सफलता को अपना मानें और विफलता में आपको निराश न होने दें. समाज से सारी नफरत दफन हो जाए, क्या यह संभव है? मुझे तो लगता है कि संभव है.टीम भावना और आपसी सहयोग की वकालत करती संस्थाएं भी यह मानेंगी कि यह संभव है. उस कक्षा के अंत में सभी ने यह माना भी कि अपनों और परायों का भेद सिर्फ तभी कम हो पाएगा, जब हम किसी और की खुशी में भी खुश होना सीखें, तथा दूसरों के दुखों को महसूस करने का मौका न चूकें। किसी और की सफलता का जश्न मनाना एक उच्चतम चेतना है.

जिनका सब कुछ छूट रहा हो, वह जीवन जो निकल रहा हो, उनको भी अपनी कांटेक्ट लिस्ट में रखा जाए. अगर ऐसा होता है, तो संख्या दहाई से काफी आगे बढ़ेगी और फिर कितने और भी आएंगे, जिनकी कांटेक्ट लिस्ट में हमारी सफलता और परेशानियों की भी जगह बनेगी. बस ध्यान रहे कि उस सूची में घमंड, ईर्ष्या और हीनता वाले कांटेक्ट्स की कोई जगह न बनने पाए, जिससे सही लोगों को जगह मिल सके.

जिन्होंने सीबीएसई, जेईई की परीक्षा पास की, उनको बधाई दीजिए, जो चूक गए, उनका भी दुख महसूस करिये और जो पेपर लीक का दंश सह गए, उनका भी. जिन प्रश्नों की चर्चा उस कक्षा में हुई. **अनुप मिश्रा.**

## मनसा वाचा कर्मणा

# कई समस्याएं अब तक नहीं सुलझ सकीं

**साल** 2014 सिर्फ एक साल नहीं है, बल्कि एक ऐसा मोड़ है, जब करोड़ों भारतीयों की उम्मीदें सिर्फ एक नाम पर टिक गई थीं- नरेंद्र मोदी. बतौर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 12 साल का सफर तय कर लिया है और उन्होंने पंडित जवाहरलाल नेहरू का लगातार निर्वाचित प्रधानमंत्री बने रहने का रिकॉर्ड तोड़ दिया है, यह एक बड़ी उपलब्धि है, लेकिन क्या बेहतर नहीं होगा कि हम उन समस्याओं की भी चर्चा करें, जिनका समाधान यह सरकार अब तक नहीं निकाल पाई है, ताकि पता चल सके कि मोदी सरकार को किस दिशा में आगे बढ़ना चाहिए?सबसे पहले बात रोजगार की. पढ़े-लिखे नौजवान आज भी भटक रहे हैं, उनके पर नौकरी नहीं है. अगर प्रतियोगी परीक्षा होती भी है, तो उसके प्रश्न-पत्र लीक हो जा रहे हैं. इसी तरह, महंगाई भी बदस्तूर आम लोगों की परीक्षा ले रही है.

रुप पर दबाव बना हुआ है और आयात महंगा है, नतीजतन घर-घर का बजट बिगड़ गया है और थाली लगातार महंगी होती जा रही है. आम आदमी की जेब तो हल्की हुई है, उनकी चिंताएं नहीं. शिक्षा और स्वास्थ्य का भी कमोबेश यही हाल है. सरकारी स्कूल और अस्पताल निस्संदेह मौजूद हैं, लेकिन क्या हम सरकारी और निजी स्कूलों के विद्यार्थियों को समान माहौल मुहैया करा पाते हैं? सरकारी स्कूलों की तो ऐसी दशा है कि अब गरीब से गरीब आदमी भी उनमें अपने बच्चों को नहीं पढ़ाना चाहता. इसी तरह, सरकारी अस्पतालों में भी लोग मजबूरीवश जाते हैं. कहने का मतलब है कि लोकतंत्र की असली परीक्षा अभी बाकी है. मोदी सरकार की उपलब्धियों पर जश्न मनाना चाहिए, लेकिन उन समस्याओं पर भी चर्चा होनी चाहिए, जिनसे आम लोग लगातार जूझ रहे हैं.एक बात और, जवाहरलाल नेहरू देश को जो देकर गए हैं, उसकी बराबरी करना आसान नहीं, अलबत्ता हर प्रधानमंत्री का अपना खास योगदान रहा है, और किसी का योगदान दूसरे से कमतर नहीं. नेहरू की बात करें, तो उन्होंने बड़े-बड़े संस्थान तब बनाए थे, जब देश गुलामी से बस आजाद हुआ था. उनके सामने तमाम तरह की चुनौतियां थीं, उस समय आर्थिक रूप से देश बहुत कमजोर था. गरीबी और बेबसी चारों तरफ पसरी हुई थी. भारत उस वक्त अपने पांव पर खड़े होने की कोशिश कर ही रहा था. तब नेहरू ने देश का कायांतरण कर दिया. प्रधानमंत्री मोदी को यह सहूलियत मिली कि जब उन्होंने देश की कमान संभाली, तब भारत अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने को तैयार था. प्रधानमंत्री ने तो उसे बस रास्ता दिखाया, जिसका नतीजा सबके सामने है. रियांशी मिश्र

प्रतिदिन अखबार

यह पत्र मालिक, प्रकाशक नानक आहूजा द्वारा देविका वेब प्रिंटर्स, राजापेठ, अमरावती से मुद्रित कर प्रतिदिन अखबार कार्यालय, देविका परिसर, ब्राम्हण सभा के पीछे, दरोगा प्लॉट, राजापेठ, अमरावती 444606 से प्रकाशित किया है. फोन - 0721-2660155/156 E-mail:-pratidinnews @gmail.com प्रतिदिन अखबार में प्रकाशित होनेवाले विभिन्न लेख, पत्र,साहित्य, लेखकों, कवियों आदि के विचारों या तथ्यों पर आधारित होते हैं. इन लेखकों के विचारों अथवा तथ्यों से संपादक की सहमति नहीं है. संपादक पर मात्र सम्पादकीय लेखों का ही दायित्व है. संस्थापक संपादक - नानक आहूजा संपादक - प्रवीण आहूजा